हाथियों को कैंसर क्यों नहीं होता?

हाल ही में प्रकाशित दो शोध पत्रों के मुताबिक हाथियों में एक ऐसे जीन की अनेक प्रतियां पाई जाती हैं जो ट्यूमर के खिलाफ काम करता है। संभवतः टीपी-53 नामक इस जीन की कई प्रतियां होने की वजह से ही हाथियों में कैंसर का प्रकोप बहुत कम होता है।

दरअसल, 1970 के दशक में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के रोग-प्रसार वैज्ञानिक रिचर्ड पेटो ने एक सम्मेलन में एक विरोधाभास की ओर ध्यान दिलाया था। उन्होंने यह बताया था कि कैंसर के प्रकोप की दर और जंतु के आकार तथा उम्र के बीच कोई सम्बंध नहीं होता। यह एक आश्चर्यजनक बात है क्योंकि जंतु जितना बड़ा होगा, उसके शरीर में कोशिकाएं उतनी ही ज़्यादा बार विभाजित हुई होंगी। इसी प्रकार से उम्र बढ़ने के साथ भी कोशिकाएं ज़्यादा बार विभाजित हो चुकी होंगी। कोशिका विभाजन के समय बेतरतीबी से उत्परिवर्तन होते रहते हैं और ऐसे उत्परिवर्तन कैंसर की संभावना को बढ़ाते हैं। यानी बड़े जंतुओं में कैंसर की संभावना ज़्यादा होनी चाहिए। पेटो का कहना था कि वास्तविकता में ऐसा होता नहीं है।

पेटो द्वारा प्रस्तुत विरोधाभास का समाधान कुछ हद तक तो उक्त शोध पत्रों में सामने आ गया है। ऐसा पता चला है कि हाथी की कोशिकाओं में टीपी-53 नामक जीन की 20 प्रतियां होती हैं जबकि मनुष्य में मात्र 1 होती है। यह जीन ट्यूमर का दमन करता है और तब सक्रिय हो उठता है जब कोशिका के डीएनए यानी आनुवंशिक पदार्थ को कोई नुकसान होता है। यह जीन एक प्रोटीन बनाता है जो या तो क्षति की मरम्मत कर देता है या कोशिका को खुदकुशी करने को तैयार करता है।

साल्ट लेक सिटी स्थित ऊटा विश्वविद्यालय के शिशु कैंसर विशेषज्ञ जोशुआ शिफमैन ऐसे बच्चों का इलाज करते हैं जिनमें टीपी-53 जीन नदारद होता है। शिफमैन ने एक सम्मेलन में सुना कि कार्लो मेली ने पाया है कि अफ्रीकी हाथी के जीनोम में टीपी-53 की कई प्रतियां पाई जाती हैं। शिफमैन के दिमाग में यह बात आई कि शायद इन हाथियों के पास ऐसा कोई सुराग है जो उनके शिशु मरीज़ों के लिए उपयोगी हो सकता है। उन्होंने मेली के साथ काम करते हुए चिड़ियाघर से हाथियों के खून के नमूने प्राप्त किए और टीपी-53 और कैंसर के सम्बंधों पर अनुसंधान कार्य को आगे बढ़ाया।

इसी दौरान शिकैगो विश्वविद्यालय के विंसेंट लिंच ने भी हाथी के जीनोम में टीपी-53 की खोज की और पाया कि उनमें इस जीन की एक-दो नहीं, पूरी 20 प्रतियां होती हैं।

अब शिफमैन और लिंच ने स्वतंत्र रूप से अपने-अपने शोध पत्र प्रकाशित किए हैं। वैसे दोनों का मानना है कि टीपी-53 शायद कुछ ही हद तक इस बात की व्याख्या करता है कि क्यों हाथियों में कैंसर का प्रकोप कम है। मगर पूरी व्याख्या टीपी-53 के आधार पर संभव नहीं है।

शोध के दौरान दोनों ने यह देखा कि हाथियों में टीपी-53 प्रोटीन की काफी मात्रा बनती है और उनकी कोशिकाओं में खुदकुशी की प्रवृत्ति भी ज़्यादा होती है। शिफमैन का कहना है कि हाथियों में डीएनए क्षति की मरम्मत करने के बजाय उन्हें मार डालने की प्रवृत्ति ज़्यादा है। इसका फायदा यह होता कि ट्यूमर को बनने से पहले ही खत्म कर दिया जाता है। ***(स्रोत फीचर्स)***